© 2017 IJSRSET | Volume 3 | Issue 6 | Print ISSN: 2395-1990 | Online ISSN : 2394-4099

वाल्मीकीय रामायण का पर्यावरणीय दृष्टि से मूल्यांकन

कन्हैया लाल यादव
(एस.आर.एफ.)
शोधच्छात्र, संस्कृत विभाग
इलाहाबाद विश्वविद्यालय, इलाहाबाद।

वर्तमान समय में सबसे बड़ी वैश्विक समस्या है–पर्यावरणीय असन्तुलन जिसने वर्तमान में सम्पूर्ण ब्रह्माण्ड की स्थिति भयावह बना दी है। पर्यावरण एक प्रकार से मानव की विकास यात्रा है। यदि मानव इतिहास को अतीत, वर्तमान और भविष्य के सन्दर्भ में देखा जाय तो उसे नियतवादी, संभावनावादी एवं नव–नियतवादी होना आवश्यक है। वर्तमान मानव जिस संभावनावादी युग में संरक्षित है उसमें पर्यावरण के समक्ष दो महत्त्वपूर्ण संकट प्राकृतिक विदोहन एवं पर्यावरण प्रदूषण व्याप्त है। मानव ने इसके द्वारा पारिस्थितिकीय संरचना को इतना बदल दिया है कि वर्तमान में प्रकृति से पर्याप्त पृथक् होकर भी उससे अनुकूलित होने में स्वयं अक्षम है। अतः आज मानव अस्तित्व के समक्ष परिस्थितिकी एक यक्षप्रश्न के रूप में उभर आई है। अब समस्या यह है कि पर्यावरण से आगे बढ़कर आये मानववाद का पर्यावरण पुनर्समायोजन कैसे संभव हो?

हमारे ऋषियों, मुनियों ने प्रकृति के सन्दर्भ में जिस पर्यावरण की परिकल्पना की थी, उसकी आज सर्वाधिक आवश्यकता है। प्राचीनतम ग्रन्थ ऋग्वेद में वर्णित पर्यावरण सन्दर्भ है–'प्रभु प्रातः काल जब हम आँखें खोले, तब पृथ्वीलोक व द्युलोक हमारे लिए सुखकारी हो, जब हम अन्तरिक्ष की ओर आँखे उठाकर देंखे तो अन्तरिक्ष भी हम पर सुख की वर्षा करे। पृथ्वी की सम्पूर्ण वनस्पति हमारे लिए मं›लकारी हो। हे विश्वपते! आपकी कृपा हमारे ऊपर ऐसी हो कि हम भी शुभ कार्य करें और हमारे चारों ओर सुख की वर्षा होती रहे।''[1]

अथर्ववेद में भूमि को माता के रूप में स्वीकार किया गया है–**''माता भूमिः, पुत्रोऽहं पृथिव्याः।''**[2] इस प्रकार वेदों में ही नहीं अपितु रामायण, महाभारत, उपनिषद्, आयुर्वेद तथा पुराणादि ग्रन्थों में वर्णित पर्यावरण के महत्त्व तथा उसके प्रति जागरूकता कतिपय न्यून नहीं है। महर्षि वालमीकि कृत आदिमहाकाव्य रामायण में

[1] शं नो द्यावा पृथ्वीपूर्वहुतौ शमन्तरिक्षं दृशये नो अस्तु।
शं न औषधिर्व निन्येअवन्तु शं नो स्वतसस्पविरस्तु विष्णुः।। ऋग्वेद–07/35/05
[2] अथर्ववेद–12/1/12

जीवन को उत्कृष्ट बनाने के लिए जिन आदर्शों का पालन किया गया है, वह मानव को उदात्त, ओजस्वी और उच्च नैतिक स्तर पर पहुँचाने में पूर्णतया समर्थ है, ''रामायण निःसन्देह एक महान रचना है। उसमें एक ओर महान निर्माता की अनुपम पाण्डित्य प्रतिभा का समावेश है, तो दूसरी ओर जिस देश और धरती पर उसका निर्माण हुआ वहाँ के सामाजिक, धार्मिक, आध्यात्मिक और आदर्शमय जीवन की समग्रताओं का एक साथ समावेश है।'' जहाँ तक वाल्मीकीय रामायण में पर्यावरण चिन्तन का प्रश्न है तो इसका विवरण रामायण के सभी काण्डों में पूर्णरूपेण दृष्टिगोचर होता है।

रामायण में जल संरक्षण के लिए कहा गया है कि 'नदी मन की तरह स्वच्छ होनी चाहिए।[3] ध्वनि प्रदूषण के सन्दर्भ में वर्णित है कि–ध्वनि प्रदूषण व्यक्ति को करूणार्द कर देता है।[4] मानव के आस–पास के निवास स्थल के विषय में भी पर्यावरण के महत्त्व को सन्दर्भित करते हुए कहा गया है कि नगर संरचना पर्यावरण को ध्यान में रखकर करनी चाहिए।[5] वाल्मीकि रामायण में जल प्रदूषण का भी विरोध दृष्टिगोचर होता है।[6] वाल्मीकीय रामायण का अरण्यकाण्ड तो वनस्पतियों का काण्ड ही कहा गया है और अरण्यकाण्ड में वन, आश्रम एवं शरद्, हेमन्त ऋतुओं का वर्णन[7] इसी प्रकार अयोध्याकाण्ड में चित्रकूट वर्णन, पर्यावरण संरक्षण की दृष्टि से महत्त्वपूर्ण ही है। वाल्मीकि को तो सरोवर में सोता हुआ हंस भी आकाश में विराजमान चन्द्र सा प्रतीत होता है।[8] रामायण के सन्दर्भ में वाल्मीकि की यह उक्ति कि जब तक पर्वतों और नदियों का अस्तित्व वर्तमान रहेगा तब तक रामायण कथा संसार में बनी रहेगी।[9]

इस महाकाव्य की व्युत्पत्ति में उल्लेख है कि कलकल निनाद करती हुई तमसा नदी के तट पर भ्रमण करते हुए महर्षि वाल्मीकि ने जब क्रौंच पक्षी का रूदन सुना तो उनके मुख से निकले हुए शोक शब्द ही

---

[3] अकर्दममिदं तीर्थ भरद्वाज निशामय।
रमणीयं प्रसन्नाम्बु सन्मनुष्यमनो यथा।। वा0रा0, बा0का0–2/5

[4] मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौ×चमिथुनादेकमवधीः काममोहितम्।।वा0रा0,बा0काः–2/15

[5] राजमार्गेण महता सुविभक्तेन शोभिताः
मुक्तपुष्पावकीर्णेन जलसिक्तेन नित्यशः।।
तां तु राजा दशरथो महाराष्ट्र विवर्धनः।
पुरीमावासयामास दिवि देवपतिर्यथा।। वा0रा0, बा0का0–5/8–9

[6] वाल्मीकीय रामायण–किष्किन्धा काण्ड–सर्ग–28

[7] हंस यथा राजत पंजरस्थः सिहों यथा मन्दर कन्दरस्यः।
वीरो यथा गर्वितोंकुन्जरस्थ चन्द्रोऽपि बभ्राज तथाऽम्बरस्थः।

[8] सुप्तैकहसं कमुदैरूपेतं महाह्रदस्थं सलिलं विभाति।
घनैर्विममुक्त निषि पूर्णचन्द्र, तारागणकीर्ण भिवान्तरिक्षम्।।

[9] यावत् स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्च मही तले।
तावत् रामायण–कथा लोकेषु प्रचरिष्यति।। रामायण–बालकाण्ड 2/36/6

रामायण की रचना का कारण बने,[10] इसमें भी हमें पर्यावरण संरक्षण के विषय में जानकारी प्राप्त होती है। अग्रिम रामायण कथा में राजा दशरथ के द्वारा कराये गये पुत्रेष्टि यज्ञ का आयोजन[11], पर्यावरण का यज्ञ द्वारा शुद्धिकरण, पृथ्वी से सीता की उत्पत्ति एवं विलय का वर्णन[12], सीता को पृथ्वी की प्रतिनिधि के रूप में प्रस्तुत कर पृथ्वी की चेतना को प्रतिपादित किया गया है। बालकाण्ड में गंगा के वर्णन में–सगर के पुत्रों को ग›ा द्वारा उद्धार तथा उसके जल को स्वच्छ तथा सम्पूर्ण पापों से मुक्ति प्रदान करने वाला[13] प्रस› जल की महत्ता एवं उसे सभी प्राणियों के प्राणतत्त्व का प्रतिपादन करता है। इसके अतिरिक्त जल की अलौकिकता, पवित्रता तथा पुण्यता का वर्णन हमें अन्य प्रसंगों जैसे–जल को पर्यावरणीय आधार के रूप में, दैवीय शक्ति के रूप में, तीर्थस्थान के रूप में भी प्राप्त होता है।[14]

यदि वाल्मीकि का दृष्टिकोण वायु के परिप्रेक्ष्य में देखा जाय तो उनके द्वारा पवनपुत्र हनुमान को वायु के प्रतिनिधि के रूप में प्रदर्शित करने से यह स्पष्ट है कि वायु के अभाव में प्राणियों के बीच जीवन का संचार असम्भव है तथा वायु के बिना शरीर को काव्य के समान और सुखरहित बताया गया है।[15]

उपरोक्त वर्णन वायु की महत्ता का ही प्रतिपादन करता है। इसके अतिरिक्त वाल्मीकि रामायण में अनेक स्थानों पर विभिन्न प्रकार की औषधियों, वनस्पतियों, लताओं, फूलों, पौधों के वर्णन में अश्वत्थवृक्ष, वटवृक्ष, खादिरवृक्ष, पलाश, शमी आदि पर्यावरण प्रदूषण रोधी वृक्षों का उल्लेख करते हुए रामायण के युद्धकाण्ड में हनुमान द्वारा द्विव्य औषधियों के प्रस› में औषधियों की महत्ता एवं उसके द्वारा पर्यावरण दर्शन के उल्लेख के

---

[10] मा निषाद प्रतिष्ठां त्वमगम त्वमगमः शाश्वतीः समाः।
यत् क्रौ×चमिथुनावेकमवधीः काममोहितम्।। (वा0रा0, बालकाण्ड–2/15)

[11] वा0रा0 अयोध्याकाण्ड।

[12] वा0रा0 बालकाण्ड–66–13,14।

[13] तत्र ऋषिगण मन्धर्वा। वसुधातल वासिनः।
भवा›पतितं तायं पवित्रमिति पस्पृशु।।
शापात् प्रपतिता ये च गगनात् वसुधातलम्।
कृत्वा तत्राभिषेकं ते बभूवुगर्तकल्मषाः।।
धूतपापा पुनस्तेन तोयेनाथ शुभान्विताः।
पुनराकाशमाविष्य स्वॉल्लोकान् प्रतिपेदिरे।।
(वा0रा0–43–26, 29)

[14] यथा साध्तु कालिन्दीं प्रतिस्त्रोतः समागताम्।
तस्यातीर्थं प्रचरितं प्रकामं प्रेक्ष्य राघवः।।
(वा0रा0–अयोध्याकाण्ड–55–5)

[15] अशरीरः शरीरेषु वायुश्चरति पालयन्।
शरीरं हि बिना वायुं समतां याति दारूभिः।।
वायुः प्राणः सुखं वायुवायुः सर्वमिदं जगत्।
वायुना सम्परित्वक्तं न सुखं विन्दते जगत्।
(वा0रा0, उत्तरकाण्ड–35–61, 62)

साथ ही एक अन्य प्रस› चित्रकूट[16] एवं पंचवटी वर्णन में पुष्प, फल तथा वृक्षों का जो उल्लेख है वह वृक्षों एवं प्रकृति के अन्तर्सम्बन्ध का ही द्योतक है।

रामायण ही एक ऐसा महाकाव्य है जिसने भारतीय साहित्य को सर्वाधिक प्रभावित किया है। वास्तव में यह पूजनीय ग्रन्थ है। वाल्मीकीय रामायण में न केवल प्राकृतिक पर्यावरण की ही बात की गयी है, अपितु इसमें मानसिक चारित्रिक, आध्यात्मिक, नैतिक, सामाजिक, सांस्कृतिक, धार्मिक एवं मनोवैज्ञानिक पर्यावरण की भी बात की गयी है।

उपर्युक्त संकल्पनाओं से स्पष्ट है कि मानव एवं प्रकृति के मध्य सहअस्तित्व का सम्बन्ध होना चाहिए। वास्तव में दो तत्त्वों के मध्य जहाँ भी सम्बन्ध है वहाँ सहअस्तित्व होना आवश्यक है। जैसे–मानव समाज में सहअस्तित्व की भावना कमजोर होने पर हिंसा बढ़ती है वैसे मानव एवं प्रकृति के मध्य सहअस्तित्व समाप्त कर देने से पारिस्थितिकी असंतुलन उत्पन्न हो जाता है और इससे मानव ही नहीं प्रत्युत सकल सृष्टि दुष्प्रभावित होती है। अतः मानव पर्यावरण सम्बन्धों से सम्बन्धित दृष्टिकोण एकांगी न होकर समन्वयकारी होना चाहिए। इसी समन्वय की निरन्तरता के लिए वर्तमान समाज में वाल्मीकि रामायण आज भी आदर्श के रूप में प्रतिष्ठित है।

[16] पुष्पवद्भिः फलोपेतैश्छायावद्भिर्मनोरमैः।
एवमादिभिराकीणः। श्रियं पुष्यत्ययं गिरिः।।
(वा0रा0, बालकाण्ड, 2, 94, 10)